



दैनिक भास्कर

Date: 29-10-26

नेताओं व अफसरों की निजता देशहित से ऊपर नहीं होती

संपादकीय

डिजिटल व्यक्तिगत डेटा संरक्षण अधिनियम (डीपीडीपी एक्ट) के खिलाफ मीडिया संस्थाओं के संगठनों ने सुप्रीम कोर्ट में याचिका देते हुए कहा है कि इससे तो न्यूजरूम में ताला लग जाएगा। खबरें नागरिकों तक न पहुंचें तो प्रजातंत्र निष्प्रभावी हो जाता है। इस कानून का सेक्शन 44 (3) लोकसेवकों के बारे में उन व्यक्तिगत सूचनाओं को भी हासिल करने से रोकता है, जो उनकी सार्वजनिक भूमिकाओं से सम्बंधित हैं। लोकसेवकों का निजता का अधिकार आम जनता से कम होता है, क्योंकि उन्होंने सोच-समझ कर सेवा का कार्य चुना होता है। इस मुद्दे पर अमेरिका और भारत की शीर्ष अदालतों के दो फैसले एक नजीर हैं- सुलिवान बनाम न्यूयॉर्क टाइम्स (1964) और पुत्तास्वामी केस (2017)। दोनों ही नौ सदस्यीय बेंचों द्वारा सर्वसम्मति से दिए गए हैं। फैसलों के अनुसार लोकसेवक स्वेच्छा से यह जीवन चुनता है, लिहाजा उसकी सभी गतिविधियों पर पैनी दृष्टि होना प्रजातंत्र के हित में है। सुलिवन केस ने तो जनता को लोकसेवकों के निजी जीवन की आलोचना का निर्बाध अधिकार दिया और कहा कि लोकसेवक को इसके खिलाफ कानूनी सुरक्षा नहीं है, जब तक कि ऐसी आलोचना किसी निहित स्वार्थ के लिए न की गई हो। भारत में भी सरकारों को लोकसेवकों के आचरण के खिलाफ ज्यादा सख्त रवैया अपनाना चाहिए, न कि उन्हें बचाने के कानून बनाने चाहिए। आखिर नेताओं और अफसरों की निजता देशहित के ऊपर तो नहीं हो सकती।

Date: 29-10-26

हम "एनर्जी-डिप्लोमेसी" के एक नए दौर में हैं

सैयद अता हसनैन, (बिहार के राज्यपाल और कश्मीर कोर के पूर्व कमांडर)

एनर्जी का वैश्विक भूगोल बदल रहा है और उसके साथ ही औद्योगिक क्षमता तथा राष्ट्रीय शक्ति के बीच गहराते संबंध भी। दशकों तक हमने एनर्जी की राजनीति में खुद को कमजोर उपभोक्ता के रूप में देखा था।

हमारी बढ़ती अर्थव्यवस्था को आयातित कच्चे तेल की जरूरत थी, लेकिन पश्चिम एशिया में होने वाले संघर्ष तेल की कीमतें बढ़ने और आपूर्ति बाधित होने का खतरा पैदा करते थे। यह कमजोरी आज भी बनी हुई है। लेकिन इस बीच भारत तेल की रिफाइनिंग और पेट्रोलियम उत्पादों के क्षेत्र में बड़ी ताकत बनकर उभरा है। इस उपलब्धि को रणनीतिक चर्चाओं में पर्याप्त महत्व नहीं दिया जाता।

रिलायंस जामनगर में प्रतिदिन 14 लाख बैरल क्रूड की रिफाइनिंग में सक्षम है। यह एक ही स्थान पर स्थित दुनिया का सबसे बड़ा रिफाइनिंग परिसर है। लेकिन इसका महत्व यहीं तक सीमित नहीं है। उन्नत तकनीक की बदौलत यहां विभिन्न किस्मों के क्रूड का शोधन किया जा सकता है। इनमें भारी और अधिक सल्फर वाला क्रूड भी शामिल है, जिसे उपयोगी और मूल्यवान ईंधन में बदलना कई रिफाइनरियों के लिए मुश्किल होता है।

जब युद्ध और प्रतिबंधों के कारण आपूर्ति के स्थापित मार्ग बाधित हो जाते हैं, तब अलग-अलग किस्म के कच्चे तेल को शोधित करने की यह क्षमता बेहद महत्वपूर्ण हो जाती है।

यही वजह है कि तेल शोधन क्षमता को भी रणनीतिक बुनियादी ढांचे का हिस्सा माना जाना चाहिए। कच्चे तेल और डीजल का एक बैरल समान नहीं होते।

कच्चे तेल को पहले परिवहन के जरिये रिफाइनरी तक पहुंचाना पड़ता है और फिर उसका शोधन करके पेट्रोलियम उत्पाद तैयार किए जाते हैं। अलग-अलग रिफाइनरियां इन ईंधनों का उत्पादन अलग-अलग अनुपात में करती हैं। कच्चे तेल के भंडार होने का यह मतलब नहीं कि डीजल भी उपलब्ध होगा। तेल उत्पादन जारी रहने के बावजूद शोधन प्रक्रिया या आपूर्ति के परिवहन में बाधा आने से ईंधन की किल्लत पैदा हो सकती है।

अब हम समझ सकते हैं कि अमेरिका की दिलचस्पी जामनगर में क्यों है। यह ईरान युद्ध से उपजी स्थितियों और वेनेजुएला के तेल भंडारों में भारी मात्रा में मौजूद कच्चे तेल का मिला-जुला समीकरण है। अमेरिकी विदेश मंत्री मार्को रुबियो ने इस बात में दिलचस्पी दिखाई है कि रिलायंस वेनेजुएला के कच्चे तेल की अधिक मात्रा में रिफाइनिंग करे। उन्होंने वेनेजुएला के तेल उत्पादन में रिलायंस की संभावित भागीदारी पर भी चर्चा की है।

वेनेजुएला में तेल उत्पादन बढ़ने से अमेरिका के आपूर्ति स्रोतों में विविधता आ सकती है। वहीं रिलायंस को प्रतिस्पर्धी कीमतों पर अपनी रिफाइनरी के अनुकूल क्रूड मिलने से उसके कामकाज में भी लचीलापन आ सकता है। वैसे इन संभावनाओं का साकार होना व्यावसायिक शर्तों और राजनीतिक परिस्थितियों पर निर्भर है।

जामनगर में उत्पादन को अनिश्चितकाल तक नहीं बढ़ाया जा सकता। रिफाइनरियों के संचालन की अपनी तकनीकी सीमाएं होती हैं। वहीं कच्चे तेल की खरीद उसकी कीमतों, ढुलाई के खर्च, अनुबंधों और प्रतिबंधों पर निर्भर करती है। भारत ईंधन की उपलब्धता बनाए रखने और बाजार पर पड़ने वाले दबाव को कम करने में मदद कर सकता है, लेकिन वह दुनिया में तेल की कीमतें तय नहीं कर सकता। तेल उत्पादन, मांग, परिवहन और भू-राजनीतिक घटनाक्रम इस मामले में निर्णायक हैं।

रूस से जुड़ा पहलू अमेरिकी नीति के अंतर्विरोधों को उजागर करता है। यूक्रेन युद्ध के बाद भारत ने रियायती दरों पर रूसी तेल खरीदा, क्योंकि उसके लिए किफायती कीमतों पर तेल की उपलब्धता और आपूर्ति की सुरक्षा जरूरी थी। अमेरिका ने प्रतिबंधों का दबाव बनाकर और टैरिफ लगाने की धमकियां देकर इस पर आपत्ति जताई। लेकिन अब वही अमेरिका भारत की तेल शोधन क्षमता के रणनीतिक महत्व को स्वीकार रहा है।

यह अमेरिकी नीति की परस्पर प्रतिस्पर्धी प्राथमिकताओं को दर्शाता है- विरोधियों पर दबाव बनाना और व्यावसायिक अवसरों का लाभ उठाते हुए घरेलू बाजार में कीमतें स्थिर रखना। हमें इन तमाम अंतर्विरोधों के बीच ही अपनी राह बनानी होगी। न तो हर बात का बिना सोचे-समझे विरोध करना हमारे हित में होगा और न ही बिना सवाल किए हर मांग मान लेना।

जरूरत है रणनीतिक धैर्य के साथ व्यावहारिक स्तर पर लचीलापन अपनाने की। रणनीतिक स्वायत्तता का मतलब यह नहीं है कि भारत अपने रुख में किसी भी तरह के बदलाव से इनकार कर दे। इसका अर्थ है यह स्वतंत्रता बनाए रखना कि हमें कब, कहां और किस तरह अपने रुख में बदलाव करना है।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत का प्रभाव अब तेजी से उन क्षमताओं पर निर्भर करेगा, जिनका विकल्प तलाशना दूसरे देशों के लिए मुश्किल हो। चीन ने मैन्युफैक्चरिंग क्षेत्र में अपनी ताकत बढ़ाकर ऐसा ही किया था। एनर्जी-डिप्लोमेसी का दायरा अब केवल कच्चे तेल की खरीद तक सीमित नहीं है।

इसमें निवेश, टेक्नोलॉजी और मैन्युफैक्चरिंग भी शामिल हैं। भारत में जामनगर के अलावा वाडीनार, कोच्चि, पारादीप, पानीपत और मंगलुरु में भी तेल रिफाइनरियां हैं। ये अंतरराष्ट्रीय ईंधन आपूर्ति शृंखलाओं में हमारी स्थिति को मजबूत बना सकती हैं। जामनगर ही नहीं, हमारे समूचे तेल रिफाइनिंग उद्योग के सामने बड़े अवसर हैं।

हमारे सामने बड़े अवसर हैं... भारत में जामनगर के अलावा वाडीनार, कोच्चि, पारादीप, पानीपत और मंगलुरु में भी तेल रिफाइनरियां हैं, जिनकी क्षमताओं का विस्तार किया जा रहा है। ये सब मिलकर अंतरराष्ट्रीय ईंधन आपूर्ति शृंखलाओं में भारत की स्थिति को मजबूत बना सकती हैं। केवल जामनगर ही नहीं, बल्कि भारत के समूचे तेल रिफाइनिंग उद्योग के सामने बड़े अवसर हैं।

Date: 29-10-26

इंटरनेट मौलिक अधिकार तो बना पर उसे सुरक्षित भी बनाएं

अर्च्य सेनगुप्ता और स्वप्निल त्रिपाठी, (विधि सेंटर फॉर लीगल पॉलिसी में पदाधिकारी)

पिछले सप्ताह सुप्रीम कोर्ट ने इंटरनेट और उसके इस्तेमाल के अधिकार को मौलिक अधिकार के रूप में मान्यता दी। न्यायमूर्ति जे.बी. पारदीवाला और के. विनोद चंद्रन की पीठ ने यह फैसला बच्चों को इंटरनेट पर होने वाले शोषण और दुरु्यवहार से बचाने से जुड़े एक मामले में सुनाया।

कोर्ट ने कहा कि बच्चों की सुरक्षा के लिए उन्हें इंटरनेट से वंचित करना आवश्यक नहीं है। इसके बजाय, इंटरनेट को उनके लिए अधिक सुरक्षित बनाने के प्रयास किए जाने चाहिए।

हालांकि यह फैसला बच्चों से जुड़े मामले में दिया गया है, लेकिन इसके परिणाम सभी नागरिकों के लिए महत्वपूर्ण हैं। 2020 में सुप्रीम कोर्ट ने माना था कि इंटरनेट के जरिये अभिव्यक्ति और व्यवसाय की स्वतंत्रता को संवैधानिक संरक्षण प्राप्त है।

हालांकि उस समय न्यायालय ने इंटरनेट तक पहुंच को मौलिक अधिकार घोषित नहीं किया था। लेकिन अब इसे स्पष्ट रूप से मौलिक अधिकार के रूप में मान्यता दी गई है।

अब नागरिकों के पास इंटरनेट तक उनकी पहुंच सीमित करने वाले सरकारी कदमों को न्यायालय में चुनौती देने का स्पष्ट संवैधानिक आधार है। इनमें सार्वजनिक व्यवस्था के नाम पर बार-बार इंटरनेट बंद करना शामिल है। ऐसे प्रतिबंध पहले भी न्यायिक समीक्षा के अधीन थे, अब उन्हें चुनौती देने का आधार मजबूत हुआ है।

लेकिन मौलिक अधिकार के रूप में मान्यता देने का महत्व केवल सरकारी हस्तक्षेप को रोकने तक ही सीमित नहीं है। इससे नागरिकों को उस अधिकार का वास्तविक लाभ उठाने के लिए सरकार से अधिक सुविधाओं और आवश्यक कदमों की मांग करने का आधार भी मिलता है। साथ ही सरकारों की जिम्मेदारी भी बढ़ती है, क्योंकि सार्वजनिक सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए आवश्यक प्रशासनिक तंत्र और वित्तीय संसाधन मुख्यतः उन्हीं के पास होते हैं।

इस संदर्भ में सूचना व शिक्षा के अधिकारों के उदाहरण महत्वपूर्ण हैं। ये बताते हैं कि न्यायालय द्वारा किसी अधिकार को मान्यता मिलने से नागरिकों की मांगों को बल मिलता है और आगे चलकर कानून, सार्वजनिक निवेश तथा ऐसी संस्थाओं का निर्माण हो सकता है, जो इन अधिकारों को सार्थक बनाती हैं।

1975 में इंदिरा गांधी के चुनाव को चुनौती देने वाली याचिका की सुनवाई के दौरान सुप्रीम कोर्ट के सामने प्रश्न उठा कि क्या सरकार प्रधानमंत्री की सुरक्षा व्यवस्था से जुड़े आधिकारिक दस्तावेजों को सार्वजनिक करने से इनकार कर सकती है। इस मामले में न्यायमूर्ति के.के. मैथ्यू ने कहा कि सरकार के कामकाज के बारे में जानने का नागरिकों का अधिकार अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का हिस्सा है।

यह मान्यता सरकार की जवाबदेही सुनिश्चित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम थी, लेकिन नागरिकों तक सरकारी जानकारी पहुंचाने का सफर अभी लंबा था। इसके बाद नागरिक संगठनों ने इस अधिकार को व्यवहार में लागू करने की मांग उठानी शुरू की, जिससे कई जनांदोलनों को बल मिला। अंततः वर्ष 2005 में

संसद ने सूचना का अधिकार अधिनियम पारित किया। आज इस कानून के अंतर्गत नागरिक हर वर्ष लाखों आवेदन दाखिल करते हैं। दूसरा उदाहरण शिक्षा के अधिकार का है। वर्ष 1993 में सुप्रीम कोर्ट ने उन्नीकृष्णन बनाम आंध्र प्रदेश राज्य मामले में शिक्षा को मौलिक अधिकार के रूप में मान्यता दी। लेकिन केवल इस मान्यता से सभी बच्चों के लिए विद्यालयों, शिक्षकों और आवश्यक सुविधाओं की उपलब्धता सुनिश्चित नहीं हो सकती थी।

इन सुविधाओं की व्यवस्था करने की जिम्मेदारी सरकारों पर ही थी। इसी दिशा में वर्ष 2002 में संसद ने संविधान में संशोधन कर छह से चौदह वर्ष के बच्चों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा को स्पष्ट रूप से मौलिक अधिकार बनाया। इसके बाद वर्ष 2009 में शिक्षा का अधिकार अधिनियम पारित हुआ।

इंटरनेट तक पहुंच का अधिकार भी ऐसी ही संभावनाएं प्रस्तुत करता है। सुप्रीम कोर्ट ने इंटरनेट तक पहुंच के अधिकार की नींव रख दी है। लेकिन न्यायालयों के पास न तो आवश्यक वित्तीय संसाधन होते हैं और न ही प्रशासनिक तंत्र कि वे केवल अपने आदेशों से इस अधिकार को वास्तविकता में बदल सकें। इसकी प्राथमिक जिम्मेदारी सरकारों की ही है, जिन्हें आवश्यक संसाधन व बुनियादी ढांचा उपलब्ध कराना होगा।

अब नागरिकों के पास इंटरनेट तक उनकी पहुंच सीमित करने वाले सरकारी कदमों को न्यायालय में चुनौती देने का अधिक स्पष्ट संवैधानिक आधार है। इनमें सार्वजनिक व्यवस्था के नाम पर बार-बार इंटरनेट बंद करना भी शामिल है।



दैनिक जागरण

Date: 29-10-26

पॉक्सो अधिनियम में सुधार आवश्यक

प्रो. ऋतु सारस्वत, (लेखिका समाजशास्त्री हैं)

हाल में इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने एक बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका पर निर्णय देते हुए पॉक्सो अधिनियम, 2012 के कठोर अनुप्रयोग और भारत की सामाजिक वास्तविकताओं के बीच संबंध पर महत्वपूर्ण टिप्पणी की। यह मामला ऐसे व्यक्ति से जुड़ा था, जिसके विरुद्ध पॉक्सो अधिनियम के अंतर्गत प्राथमिकी दर्ज की गई थी। लड़की के माता-पिता ने यह कहते हुए मामला दर्ज कराया था कि उनकी बेटी नाबालिग है, जबकि लड़की ने न्यायालय के समक्ष अपने साथी के साथ रहने की इच्छा व्यक्त की थी।

न्यायालय ने सामाजिक परिस्थितियों, अशिक्षा और गरीबी जैसी कठोर वास्तविकताओं को ध्यान में रखते हुए कहा, 'पोक्सो अधिनियम का क्रियान्वयन कुछ तथ्यात्मक परिस्थितियों में ऐसे परिणाम उत्पन्न कर सकता है, जो न्याय के बजाय अन्याय को बढ़ावा देने वाले प्रतीत हों।' न्यायालय ने विधि आयोग से अधिनियम में संभावित संशोधनों पर विचार करने का अनुरोध किया, ताकि असाधारण परिस्थितियों में विशेष न्यायाधीशों को सजा निर्धारित करने में अधिक विवेकाधिकार देने की संभावना पर विचार किया जा सके।

कुछ समय पहले सर्वोच्च न्यायालय ने 'उत्तर प्रदेश राज्य बनाम अनिरुद्ध एवं अन्य' मामले में भी पोक्सो अधिनियम के दुरुपयोग से जुड़े प्रश्नों पर विचार किया था। यह मामला लगभग 12 वर्ष की एक लड़की की मां द्वारा दर्ज कराई गई प्राथमिकी से संबंधित था, जिसमें लड़की को घर से ले जाने का आरोप लगाया गया था। आरोपित को इलाहाबाद उच्च न्यायालय से जमानत मिलने के बाद राज्य ने सर्वोच्च न्यायालय में अपील की थी।

सर्वोच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में किशोर संबंधों के संदर्भ में पोक्सो अधिनियम के दुरुपयोग पर चिंता व्यक्त करते हुए कहा था, 'इस निर्णय की एक प्रति भारत सरकार के विधि सचिव को भेजी जाए, ताकि इस समस्या पर अंकुश लगाने के लिए यथासंभव कदम उठाने पर विचार किया जा सके। इन कदमों में अन्य उपायों के साथ-साथ एक ऐसे 'रोमियो-जूलियट प्रविधान' को शामिल करने की संभावना भी हो, जो किशोर संबंधों को इस कानून के कठोर प्रभाव से मुक्त करे। साथ ही ऐसी व्यवस्था बनाने पर भी विचार किया जाए, जिसके माध्यम से उन व्यक्तियों के विरुद्ध अभियोजन चलाया जा सके, जो इन कानूनों का उपयोग आपसी हिसाब चुकता करने अथवा बदला लेने के लिए करते हैं।' सर्वोच्च न्यायालय की यह चिंता स्वाभाविक है, क्योंकि विधिक व्यवस्था का मूल उद्देश्य समाज का संरक्षण और न्याय की स्थापना करना है।

किशोरावस्था में लिए गए निर्णयों और उनसे जुड़ी कानूनी प्रक्रिया का प्रभाव किसी व्यक्ति की प्रतिष्ठा, शिक्षा और भविष्य पर पड़ सकता है। इसी संदर्भ में 2022 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने 'अतुल मिश्रा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं तीन अन्य' मामले में कहा था कि किशोरावस्था में परस्पर आकर्षण के कारण लिए गए निर्णय आवेगपूर्ण और अपरिपक्व हो सकते हैं, लेकिन उन्हें केवल इसी आधार पर पाप या कलंकित नहीं माना जाना चाहिए।

पोक्सो अधिनियम के कठोर प्रविधानों को बिना परिस्थितियों पर पर्याप्त विचार किए लागू करने से किशोरों की प्रतिष्ठा और भविष्य को अपूरणीय क्षति पहुंच सकती है। किशोरावस्था में एक-दूसरे के प्रति आकर्षण और भावनात्मक जुड़ाव विकसित होना स्वाभाविक है। इस अवस्था में विकसित होने वाला प्रत्येक संबंध किसी अनुचित मंशा का प्रमाण नहीं होता। कई बार किशोर भावनाओं और आकर्षण को समझते हुए एक-दूसरे के निकट आते हैं, जबकि संबंधों की जिम्मेदारियों और उनके दूरगामी परिणामों को समझने की उनकी क्षमता अभी विकसित हो रही होती है। इसलिए ऐसे संबंधों का मूल्यांकन करते समय केवल उम्र या संबंध की प्रकृति

को आधार बनाने के बजाय उनकी परिस्थितियों, आपसी व्यवहार तथा दबाव अथवा शोषण की उपस्थिति को भी ध्यान में रखना आवश्यक है।

भारतीय समाज में किशोरों के प्रेम-संबंधों का प्रश्न व्यक्तिगत भावनाओं से कहीं आगे जाकर पारिवारिक मान्यताओं, सामाजिक प्रतिष्ठा और परंपरागत मूल्यों से जुड़ जाता है। एक ओर किशोरावस्था में विकसित होती भावनात्मक स्वतंत्रता और अपनी पसंद के अनुसार संबंध चुनने की आकांक्षा है तो दूसरी ओर परिवार और समुदाय की अपेक्षाएं, जिनमें जाति, पंथ और विवाह संबंधी परंपराओं की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। इन दोनों के बीच टकराव की स्थिति में किशोरों के संबंध कभी-कभी पारिवारिक विवाद और सामाजिक तनाव का कारण बन जाते हैं। अनेक बार परिवार की असहमति ऐसे संबंधों को स्वीकार करने के बजाय उनका विरोध करने का रूप ले लेती है और मामला कानूनी टकराव तक पहुंच जाता है। ऐसे में यह प्रश्न महत्वपूर्ण हो उठता है कि बालकों को यौन शोषण और दुर्व्यवहार से संरक्षण देने के लिए निर्मित कानून का उपयोग वास्तविक अपराधों और पारिवारिक असहमति से उपजे विवादों के बीच अंतर को किस सीमा तक पहचान पाता है।

किशोरावस्था की भावनाओं को अपराध की भाषा में समझने से पहले उनकी सामाजिक और मनोवैज्ञानिक वास्तविकताओं को समझना आवश्यक है। बाल संरक्षण का उद्देश्य किसी भी प्रकार के शोषण से बच्चों को सुरक्षित रखना है, लेकिन न्याय की प्रक्रिया में उनके भविष्य और गरिमा की रक्षा भी उतनी ही महत्वपूर्ण है।

Date: 29-10-26

नशीले पदार्थों का बढ़ता जोखिम

ज्योति सिडाना



सरकार का दायित्व नागरिकों को केवल आर्थिक अवसर उपलब्ध कराना नहीं, बल्कि उन्हें स्वस्थ, सुरक्षित और सम्मानजनक जीवन जीने के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान करना भी है। नशीले पदार्थों से उपजी समस्या को भी इस कसौटी पर गंभीरता से देखने की जरूरत है। इनके वैध कारोबार से मिलने वाले राजस्व का तर्क अपनी जगह है, लेकिन सवाल है कि क्या यह कमाई समाज और अर्थव्यवस्था को नशे के कारण होने वाले नुकसान से ज्यादा महत्वपूर्ण है!

जब किसी पदार्थ का सेवन व्यक्ति के स्वास्थ्य, विवेक, संबंधों और उत्पादकता को नष्ट करने लगे, तब उसे केवल व्यक्तिगत पसंद मानकर छोड़ देना सरकार और समाज, दोनों का जिम्मेदारी से मुंह मोड़ने जैसा है। यही नहीं, नशीले पदार्थों का अवैध कारोबार भी लगातार फैलता जा रहा है, जो खासकर युवाओं को अपनी गिरफ्त में ले रहा है।

नशे की समस्या को समझने के लिए सबसे पहले आदत और लत के बीच का अंतर जानना जरूरी है। आदत को बदला जा सकता है, लेकिन लत व्यक्ति की इच्छाशक्ति, निर्णय क्षमता और दैनिक जीवन को इस हद तक प्रभावित कर सकती है कि उससे बाहर निकलना कठिन हो जाता है। यहां चर्चा मादक पदार्थों, शराब और तंबाकू के सेवन की हो रही है। आधुनिक तंत्रिका विज्ञान नशे की लत को मस्तिष्क की कार्यप्रणाली में होने वाले बदलावों से जोड़ता है।

नशीले पदार्थों के सेवन से मस्तिष्क की प्रणाली प्रभावित होती है और निर्णय लेने तथा आवेगों पर नियंत्रण रखने की क्षमता कमजोर पड़ती है। इसीलिए नशे की लत को केवल चरित्र की कमजोरी या इच्छाशक्ति का अभाव मानना उचित नहीं है। यह ऐसी समस्या है, जिसके लिए उपचार और पुनर्वास की जरूरत होती है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से देखें, तो नशा कई बार व्यक्ति के लिए तनाव, अकेलेपन, अवसाद या पुराने मानसिक आघात से अस्थायी राहत पाने का माध्यम बन जाता है। सवाल यह नहीं कि व्यक्ति नशे की ओर क्यों आकर्षित हुआ, बल्कि यह भी है कि वह किस पीड़ा से बचने की कोशिश कर रहा है। बचपन में हिंसा, उपेक्षा, पारिवारिक कलह और असुरक्षा के अनुभव आगे चलकर नशे के जोखिम को बढ़ा सकते हैं।

इसका अर्थ यह नहीं कि ऐसे अनुभवों से गुजरने वाला हर व्यक्ति नशे का आदी हो जाएगा, बल्कि यह कि समय रहते भावनात्मक सहारा और उचित सहायता मिलने से जोखिम कम किया जा सकता है। समाजशास्त्रीय दृष्टि से नशे को व्यक्तिगत समस्या तक सीमित नहीं रखा जा सकता। परिवार, मित्र समूह, रोजगार, सामाजिक संबंध और आसपास का वातावरण उसके व्यवहार को प्रभावित करते हैं।

दूसरी ओर, यदि परिवार और मित्रों के बीच नशे को सामान्य व्यवहार या प्रतिष्ठा का प्रतीक माना जाता है, तो खासकर किशोर और युवा इसे अपनाने के लिए प्रेरित हो सकते हैं। कभी वे परिपक्व दिखने के लिए, कभी साथियों के दबाव में और कभी आत्मविश्वास या ऊर्जा बढ़ाने की गलत धारणा के कारण नशे की शुरुआत करते हैं। इस तरह व्यक्तिगत चुनाव के पीछे सामाजिक परिस्थितियों की भूमिका भी खास होती है।

अमेरिकी मनोवैज्ञानिक ब्रूस अलेक्जेंडर के चर्चित 'रैट पार्क' प्रयोग ने इस संबंध में एक महत्वपूर्ण सवाल उठाया। प्रयोग में चूहों के अलगाव और समृद्ध सामाजिक वातावरण के बीच नशीले पदार्थों के सेवन के व्यवहार की तुलना की गई। इससे यह समझने में मदद मिली कि सामाजिक संपर्क और अनुकूल वातावरण नशे के व्यवहार को प्रभावित कर सकते हैं। इसी तरह वियतनाम युद्ध के दौरान हेरोइन का सेवन करने वाले अमेरिकी सैनिकों पर किए गए एक अध्ययन में उनमें से ज्यादातर का स्वदेश लौटने के बाद नशे से दूर हो जाना दर्ज किया गया।

इन निष्कर्षों से यह संकेत मिलता है कि नशे की लत को समझने में वातावरण, तनाव और सामाजिक परिस्थितियों की अनदेखी नहीं की जा सकती। हालांकि, इससे यह निष्कर्ष निकालना सही नहीं होगा कि केवल माहौल बदलने से हर व्यक्ति की लत बिना उपचार के छूट सकती है। कई लोगों को चिकित्सकीय सहायता और लंबे समय तक सहयोग की जरूरत होती है।

नशे के प्रसार के पीछे आर्थिक हितों का प्रश्न भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। एक ओर सरकारें शराब और तंबाकू से राजस्व प्राप्त करती हैं, दूसरी ओर उन्हीं के दुष्परिणामों से निपटने के लिए स्वास्थ्य सेवाओं, जागरूकता अभियानों और नशामुक्ति कार्यक्रमों पर खर्च करती हैं। यह विरोधाभास सार्वजनिक नीति की गंभीर चुनौती है। राजस्व को उपलब्धि

मानने से पहले यह आकलन होना चाहिए कि नशे के कारण स्वास्थ्य पर पड़ने वाला बोझ, कार्यक्षमता में कमी, दुर्घटनाएं, पारिवारिक संकट और अपराध की आशंका समाज से कितनी बड़ी कीमत वसूलते हैं।

किसी पदार्थ से होने वाली आय को उसके सामाजिक नुकसान से अलग करके नहीं देखा जा सकता। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने शराब और मनःप्रभावी पदार्थों के सेवन को गंभीर सार्वजनिक स्वास्थ्य चुनौती माना है। इसके बावजूद नशे का आकर्षण कम नहीं हो रहा। फिल्मों, मनोरंजन और सामाजिक आयोजनों में शराब या धूम्रपान को आधुनिकता, सफलता और उत्सव से जोड़कर दिखाने का असर युवाओं पर पड़ सकता है।

नशीले पदार्थों पर प्रतिबंध को लेकर कानूनी प्रावधान मौजूद हैं, लेकिन उनके प्रभावी क्रियान्वयन की जरूरत है। सार्वजनिक स्थानों पर धूम्रपान न करने, शैक्षणिक संस्थानों के आसपास तंबाकू उत्पादों की बिक्री पर नियंत्रण, नाबालिगों को नशीले पदार्थों से दूर रखना और इनके अवैध कारोबार पर कार्रवाई जैसे कदम तभी प्रभावी होंगे, जब निगरानी और जवाबदेही सुनिश्चित हो। इस संदर्भ में आइसलैंड का अनुभव उल्लेखनीय है।

वहां किशोरों में नशे की प्रवृत्ति कम करने के लिए परिवारों की भागीदारी, खेलकूद, संगीत और अन्य रचनात्मक गतिविधियों के अवसर बढ़ाने तथा बच्चों के खाली समय को सकारात्मक दिशा देने पर जोर दिया गया। इस दृष्टिकोण का मूल विचार था कि किशोरों को केवल नशे से दूर रहने की सलाह देना पर्याप्त नहीं, उन्हें ऐसे विकल्प भी चाहिए, जो जीवन में आनंद, अपनापन और उद्देश्य की भावना पैदा करें। भारत में भी खेल के मैदान, पुस्तकालय, सांस्कृतिक केंद्र और परामर्श सेवाएं विशेषकर छोटे शहरों तथा ग्रामीण क्षेत्रों में सुलभ कराई जानी चाहिए।

नशामुक्त समाज के लिए तीन स्तरों पर काम करना होगा-रोकथाम, उपचार और पुनर्वास। रोकथाम के तहत परिवार, विद्यालय और समुदाय मिलकर ऐसा वातावरण बनाएं, जिसमें नशे को प्रतिष्ठा नहीं, जोखिम समझा जाए। उपचार के स्तर पर नशे की लत से जूझ रहे व्यक्ति को अपराधी या नैतिक रूप से कमजोर मानने के बजाय चिकित्सकीय सहायता उपलब्ध कराई जाए। पुनर्वास में रोजगार, सामाजिक स्वीकार्यता और पारिवारिक सहयोग की भूमिका सुनिश्चित हो, ताकि उपचार के बाद व्यक्ति सम्मानपूर्वक जीवन की ओर लौट सके।

केवल नशा छोड़ने की सलाह देना पर्याप्त नहीं, उसे जीवन में लौटने का अवसर भी देना होगा। नशे के विरुद्ध लड़ाई का उद्देश्य केवल नशीले पदार्थों की खपत घटाना नहीं, बल्कि उन परिस्थितियों को बदलना भी होना चाहिए, जो व्यक्ति को उनकी ओर धकेलती हैं। सुरक्षित बचपन, सार्थक रोजगार, मानसिक स्वास्थ्य सेवाएं और रचनात्मक गतिविधियां नशामुक्ति की मजबूत नींव बन सकती हैं।

Date: 29-10-26

रिलायंस और विकास

संपादकीय



लंबे समय से देश में सबसे अक्वल रहे टाटा समूह का 28 अक्टूबर, 2026 को रिलायंस समूह से पिछड़ जाना एक निर्णायक घटना है। रिलायंस समूह को यह बादशाहत अपनी कंपनी जियो प्लेटफॉर्म लिमिटेड के शेयर के सूचीबद्ध होते ही हासिल हुई है। यह भारत में अब तक का सबसे बड़ा आईपीओ या शेयर सौदा है और इससे रिलायंस की डिजिटल और दूरसंचार इकाई का कुल बाजार पूंजीकरण बढ़कर 12.50 ट्रिलियन रुपये हो गया है। एकल कंपनी के रूप में देखें, तो जियो प्लेटफॉर्म

देश की दूसरी सबसे बड़ी कंपनी हो गई है और पहले स्थान पर भी रिलायंस इंडस्ट्रीज ही है। बड़ा बदलाव यह हुआ है कि एयरटेल को पछाड़कर जियो देश की सबसे बड़ी सूचीबद्ध दूरसंचार ऑपरेटर बन गई है। ध्यान रहे, जियो को देश में नंबर वन दूरसंचार कंपनी बनने में महज दो दशक लगे हैं। इसमें कोई दोराय नहीं कि रिलायंस समूह ने बहुत सुनियोजित ढंग से दूरसंचार क्षेत्र में अपने पांव पसारे हैं और यह अपने आप में विशेष अध्ययन का विषय है।

रिलायंस समूह ने बहुत तैयारी से कदम आगे बढ़ाए हैं और इस अवसर पर अंबानी परिवार की मौजूदगी भी यादगार मानी जाएगी। विशेष रूप से रिलायंस समूह के मुखिया मुकेश अंबानी के लिए यह अवसर ऐतिहासिक है। साल 1977 में पहली बार उनके पिता धीरुभाई अंबानी के नेतृत्व में रिलायंस ने अपने शेयर 10-10 रुपये में बेचे थे।

तब मुकेश अंबानी 20 साल के थे और रिलायंस की शेयर आधारित उद्यमशीलता को उन्होंने बेहतरीन ढंग से आगे बढ़ावा साल 1977 में रिलायंस का मूल्य 70 करोड़ रुपये के आसपास हुआ करता था और आज मुकेश अंबानी के नेतृत्व में यह समूह 12 लाख करोड़ रुपये का आंकड़ा छूने की ओर बढ़ रहा है। रिलायंस आज दावा करता है कि उसने भारत में डाटा का लोकतंत्रीकरण किया है, तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। ग्राहक तो यही उम्मीद करेंगे कि रिलायंस समूह एआई, क्लाउड सेवा, अंतरिक्ष से सीधी सेवा और अन्य डिजिटल सेवाएं देने में दुनिया के किसी भी समूह से पीछे नहीं रहे। दूसरी ओर, टाटा समूह, एयरटेल और अन्य तमाम भारतीय कंपनियों को अपनी बेहतर सेवा के सहारे तेजी से आगे बढ़ना होगा।

अब आंकड़े बता रहे हैं कि रिलायंस समूह का संयुक्त बाजार मूल्य 30 ट्रिलियन रुपये से अधिक हो गया और इसने टाटा समूह को 25 ट्रिलियन रुपये पर पीछे छोड़ दिया है। हालांकि, समग्रता में रिलायंस के शेयरों में इस साल 25.4 प्रतिशत की गिरावट आई है, अतः चुनौतियां उसके सामने भी बहुत हैं। शेयर बाजार में गिरावट से आज लगभग हर भारतीय कंपनी चिंतित है। इन कंपनियों को मुश्किल समय में भी लोगों और निवेशकों का जो भी समर्थन मिल रहा है, वह व्यर्थ नहीं जाना चाहिए। बेशक, कंपनियों की पूंजी में वृद्धि हो पर बुनियादी अपील यही है कि आम लोगों के विकास को सीधे बल मिले। बीते समय में भारतीय अर्थव्यवस्था चौथे से छठे स्थान पर पहुंच गई है, पर प्रेरक तथ्य यह है कि 25 साल पहले हमारी अर्थव्यवस्था 13वें स्थान पर थी। देश का सकल घरेलू उत्पाद बीते 25 साल में 21 लाख करोड़ रुपये से

345 लाख करोड़ रुपये तक पहुंच गया है, जबकि भारतीयों की सालाना आय 17,789 रुपये से बढ़कर दो लाख रुपये से ऊपर पहुंच गई है। अर्थव्यवस्था में यह एक श्रृंखला है, जिसे और मजबूत व संतुलित बनाने की जरूरत है। कंपनियों को तेजी से आगे बढ़ने के साथ ही आय वितरण का औसत भी सुधारते चलना होगा।
